पंचम अध्याय
समकालीन कवयित्रियों का भाषा एवं शिल्प
पंचम अध्याय
5. समकालीन हिंदी कवित्रियों का भाषा एवं शिल्प

5.0 प्रस्तावना

वस्तु और रूप का सम्बन्ध अविभाज्य है। सेवंदना और संरचना को अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता। ‘वस्तु’ को अपनी अभिव्यक्ति के लिए रूप की आवश्यकता होती है। तथा रूप के माध्यम से ही वस्तु को अभिव्यक्ति मिलती है। कबी अजेय जी तीसरे सन की भूमिका में कहते हैं - "वस्तु से रूपाकर को अलग नहीं किया जा सकता। क्योंकि दोनों का सामजस्य अधिक सम्बन्ध और प्रभावशाली होता है।"\(^1\) अतः कहा जाएगा कि वस्तु के अभाव में शिल्प निष्प्राप्त है, तो शिल्प की अनुपस्थिति में वस्तु अदृश्य स्पन्दन मात्र है। साहित्य कृति के रचनात्मक रूप का सम्बन्ध शिल्प से है। साहित्यकार अपनी संवेदना को शिल्प के माध्यम से साकार बनाता है और शिल्प विधि के कारण ही साहित्य में कलात्मक सौन्दर्य की निर्मिति होती है।

5.1 शिल्प - अर्थ परिभाषा और स्वरूप :-

5.1.1 संस्कृत में शिल्प शब्द का अर्थ :-

उणादिकोश के अनुसार "शिल्प शब्द शीलसमाधी धातु से ‘ प ’ प्रत्यय और शील को ‘पहस्व ‘ लगाकर बनता है।"\(^2\)

काशिका में शिल्प का अर्थ है - "शिल्प कौशलम् तथा न्यास में क्रियाभास पूर्व को जान विशेषः."\(^3\)

हलायुध कोश में शिल्प का अर्थ "क्रिया कौसलम् के अर्थ में लिया गया है।"\(^4\)
श्री वामन शिवराम आप्टे के मतानुसार "शिल्प शब्द की उत्पत्ति शिल्प + पक्के के रूप में हैं, जिसका अर्थ - कला, ललित कला, यांत्रिक कला, कुशलता, कारीगरी आदि है।"5

शब्द कल्पदृश्य में "शिल्प शब्द का अर्थ कलातिक कर्म के रूप में बताया गया है।"6

सर मोनिघर विलियम्स ने अपने संस्कृत - अंग्रेज़ी शब्दकोश में शिल्प शब्द के अनेक अर्थ दिए हैं। जो इस प्रकार हैं -

"(I) कलात्मक कार्य

(II) कोई भी हस्तकला, यांत्रिक या ललित कला

(III) काव्य, संगीत, अभिनय, नृत्य आदि।

(IV) किसी भी कला, शिल्प कला - कार्य में कौशल

(V) रूप आकृति"7

संस्कृत के साहित्यिक ग्रन्थों में "शिल्प शब्द का प्रयोग अनेक रूपों में मिलता है। यथा - 'एतरेय ब्राह्मण' में - विधाता की रचना को देव - शिल्प और मनुष्य की सृष्टि के लिए एतेपाम् वैशिल्पनाम् कहा गया है। 'मनुसृति' में शिल्प का अर्थ कला कौशल के रूप में हुआ है। भरतमुनी के 'नाट्यशास्त्र' में - कलाओं तथा शिल्प को काव्य का अंगांगी मात्र कहा गया है।"8

'मैत्रायणि उपनिषद' में शिल्प का अर्थ - "कला, 'अथर्ववेद' के परिशिष्ट में - कारागीर, 'श्रोतसूत्रों, धर्मसूत्रों तथा पाणिनी की अद्व्ययायी ' इन तीनों में गीत, नृत्य तथा वादन को शिल्प कहा गया है। 'रामायण' में शिल्पकार अर्थात् कलाकार और शिल्पी अर्थात् चर्चकार जैसा कारागीरता तथा स्थापत्य के अर्थ में भी शिल्प का प्रयोग
है। ‘कोटिल्य अर्थशास्त्र’ में शिल्प शब्द का संगीत, नृत्य आदि लिखित कलाओं के अर्थ में प्रयोग हुआ है। ‘गणिका रूपयोजन शिल्प युक्त’। चाहिए यह कहा है। शिल्प की कला के अर्थ में भी लिया है। ‘वैराहमिशर’ ने कलाकूसर का कार्य इस अर्थ में शिल्प शब्द का वृहज्ञातक में प्रयोग किया है।9

इस प्रकार उपयुक्त उल्लेखों से कहा जा सकता है कि शिल्प शब्द का प्रयोग मुख्तयत: दो अर्थों में किया जाता है - एक तो कौशलपूर्ण रचना के अर्थ में और दूसरे- नृत्य, वादन, मूर्ति निर्माण या स्थायी कला आदि विभिन्न कलाओं के अर्थ में। लेकिन अधिकतर विद्वानों ने शिल्प को रचना किया कौशल एवं कला कौशल के अर्थ में ही स्वीकार किया है।

5.1.2 अंग्रेजी में शिल्प शब्द का अर्थ :-

शिल्प शब्द का बोध अंग्रेजी के तेकनिक (Technique) शब्द से होता है। शिल्पविधि अंग्रेजी के तेकनिक शब्द का ही हिंदी रूपस्तरण माना जाता है। जिसका अर्थ है - विधि, धंग, तरीका, विधान, निर्माण - प्रक्रिया, रचना-शिल्प, कला-कौशल आदि। इन शब्दों के लिए अंग्रेजी भाषा में आर्ट, एक्सप्रेशन, टेक्निक, क्राफ्ट, सेटिंग, स्टेटस्ट, कन्स्ट्रक्शन आदि शब्दों का प्रयोग होता है। परन्तु अधिकतर विद्वान इन विभिन्न शब्दों में शिल्प-विधियों के लिए अंग्रेजी के तेकनिक शब्द को ही अधिक उचित मानते हैं।

दि वर्ल्ड वुड डिक्शनरी में टेकनिक का अर्थ है - "किसी भी विषय के निर्माण करने के लिए प्रयोग किया जानेवाला तंत्र या पद्धति। किसी भी क्षेत्र का ज्ञान जैसे कविकला, चित्त्रकार का कौशल संगीतकार का तंत्र आदि " बताया गया है।"10

बहुत अंग्रेजी-हिंदी क्रेश के अनुसार "टेकनिक के लिए शिल्प-विधि, पद्धति, रचना-प्रणाली आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है।"11
मानक अंग्रेजी-हिंदी कोश में "टेक्नीक के लिए प्रविधि, शिल्प-विधान का प्रयोग मिलता है।" 12

5.1.3 हिंदी में शिल्प शब्द का अर्थ :-

हिंदी शब्दकोशों में शिल्प का अर्थ इस प्रकार दिया गया हैं

(I) हिंदी शब्द सागर में शिल्प के अर्थ -

"(a) हाथ से कोई चीज़ बनाकर तैयार करने का काम। दस्तकारी, हृदर-जैसे बरतन बनाना, कपड़े सीना, गाहने गढ़ना आदि।

(b) कला सम्बन्धी अभ्यास, दक्षता, पाटव, कौशल, चातुर्य।

(c) निर्माण, सृजन, सृजन, रचना, आकार, आवृत्ति रूप।

(d) अनुदान, क्रिया, धार्मिक कृत्य, यज आदि में प्रयुक्त शब्द।" 13

(II) “नालन्दा विशाल शब्द सागर – शिल्प– कोई वस्तु हाथ से बनाकर तैयार करने का काम। दस्तकारी, कारीगरी, कला सम्बन्धी अभ्यास।" 14

(III) हिंदी शब्दकोश में शिल्प को भिन्न अर्थों में लिया गया हैं – "हस्तकला, दस्तकारी, दस्तकारी का कौशल, शिल्पी, कारीगर-मकान बनानेवाला राज, शिल्प का काम, शिल्पकार, शिल्प सम्बन्धी शिल्प का काम करने की जगह, शिल्पकार्य स्थल, शिल्प का जाता, शिल्पत्व, पत्थर तांबे आदि पर अधार बोधने की कला, शिल्प की कला, शिल्प सिखाने की पाठशाला, साहित्यिक रचना डंग आदि।" 15

5.2 शिल्प की परिभाषा :-

अनेक विद्वानों ने शिल्प को भिन्न - भिन्न कोषों से परिभाषित किया है। यहाँ कुछ परिभाषाओं को देखने का प्रयास किया जा रहा है।
(I) डॉ.सतपाल चुके के अनुसार - "विश्ववस्तु को कला के रूप में ढालने या उसके ढल जाने की प्रक्रिया को शिल्प-विधि कहते हैं।"\(^{16}\) विश्ववस्तु को कला के अंग के रूप में प्रस्तुत करना शिल्प का कार्य है। कला के साथ कलाकार का जो सम्बन्ध होता है वह शिल्प का रूप बन जाता है।

(II) डॉ.नारायण अग्रिहोत्री शिल्प के सम्बन्ध में लिखते हैं - "जान अपने में अखण्ड हैं और शायद है। पर उसे अपने ढंग से आत्मसात करके नये सिरे से लोक चेतना के लिए ग्राह्य रूप से प्रस्तुत करने के लिए लेखक द्वारा जो बौद्धिक नियोजन किया जाता है उसी को लेखक का रचना कौशल या शिल्प-विधान कहते हैं।"\(^{17}\) यहाँ लेखक का बौद्धिक नियोजन ही रचना-कौशल या शिल्प-विधान माना गया है। अर्थात् जान को आत्मसात कर उसे प्रस्तुत करने का हर रचनाकार का अपना ढंग होता है।

(III) डॉ.बिश्वन सिंह का शिल्प के सम्बन्ध में मत हैं - "कल्पना और यथार्थ के भेद को समायोजन करने का काम शिल्प ही करता है। जिसके माध्यम से अभिप्रेत भावों अथवा उद्देश्य का रूपांतरण संभव होता है।"\(^{18}\) अर्थात् रचनाकार अपनी रचना की विकासो-मूख सम्भावनाओं पर सुंधर दृष्टि डालते हुए उसकी विशेषताओं को बनाये रखने के लिए शिल्प को अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाता है।

(IV) डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल शिल्प सम्बन्धी लिखते हैं - "किसी भाव को एक निश्चित रूप देने के लिए जो विधान प्रस्तुत किये जाते हैं वही उस कला की शिल्प विधि है।"\(^{19}\) यहाँ शिल्प के माध्यम से रचनाकार अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है।

(V) डॉ.प्रेम भट्टाचार्य का मानना है कि - "शिल्प का सम्बन्ध भाव, विचार, लक्ष्य और अनुभूति पक्ष को अपना भाषा, शैली और विधा पक्ष से अधिक जुड़ता है। शिल्प किसी कलाकार की कला द्वारा अभिव्यक्त भाव एवं चित्रललाभ को स्पष्ट
करने का साधन या विधा है।"20 स्पष्ट है कि डॉ.बटनागर शिल्प को भाव, विचार, लक्ष्य, अनुभूति की अपेक्षा साहित्य के कलाकार से जोड़कर देखते है।

(VI) डॉ.जवाहर सिंह ने शिल्प-विधि की परिभाषा देते हुए कहा है - "शिल्प-विधि से तात्पर्य किसी कृति के निर्माण की उन सारी प्रक्रियाओं तथा रचना पद्धतियों से हैं, जिनके माध्यम से शिल्पकार या रचनाकार अपनी अमूर्त जीवनानुभूतियों मन प्रभावों तथा विचारों और भावों को मूर्त रूप देकर अधिकाधिक संवैधान्य और सौन्दर्यमुद्रक बनाता है।"21 स्पष्ट है कि डॉ.जवाहर सिंह अपने अमूर्त भावों को मूर्त रूप देने और जीवन की अनुभूतियों को अधिकाधिक संबद्धता बनाने की स्थिति की शिल्प - विधि मानते है।

(VII) श्री बटरोही शिल्प को परिभाषित करते हुए कहते हैं - "शिल्प का समवन्ध मुख्यतः वर्णित की जाने वाली विषय वस्तु से है। यानी जो भाव वर्णित किया जा रहा है, उसे अधिक से अधिक स्वामाधिक ढंग से किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए, प्रस्तुत किये जाने का यही ढंग शिल्प कहलाता है।"22 प्रस्तुत परिभाषा में शिल्प को अपनी संरचना की विधि के महत्वपूर्ण घटक माना गया है।

(VIII) जैनेन्द्र कुमार ने शिल्प-विधि की व्याख्या करते हुए कहा है - "टेक्नीक ढाँचे के नियमों का नाम है। पर ढाँचे की जानकारी की उपयोगिता इसी में है कि वह सजीव मनुष्य के जीवन में काम आये।"23 जैनेन्द्र कुमार की दृष्टि में शिल्प - विधि और कलाकृति की रचना विधि में समानता होती है। दोनों एक दूसरे से संबंधित है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर सारांश रूप में कहा जा सकता है कि टेक्नीक या शिल्प-विधि अर्थात ऐसा तरीका या ढंग जिसके माध्यम से रचनाकार लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। शिल्प से अभिप्राय यह भी लिया जाता है कि जिसके द्वारा रचनाकार अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति करता है। शिल्प रचनाकार की प्रतिभा, सृजनशील कल्पना का बहु परिणाम हैं, जिससे उसकी चित्तनशीलता अथवा मननशीलता को साहित्य का रूप प्राप्त होता है।
5.3 शिल्प का स्वरूप :-

शिल्प शब्द को रचना कौशल के रूप में स्वीकार किया गया है। शिल्प विधि या शिल्प विधान का सम्बन्ध वस्तुतः साहित्य के सृजन पक्ष से होता है। रचनाकार के मस्तिष्क में समाज की सज्जाओं, आदमी की हालत और परिवेश के यथार्थ संग्रहित होते रहते हैं। इन सभी का वर्णन करने के लिए उसके मन में भावों का उद्देश्य होता है। वह इन संग्रहित भावों अथवा भाववर्षु को साहित्य के विशाल कैनवास पर उतारना चाहता है और रचनाकार जिस इंग से जिस प्रक्रिया से उसे उतारता है, वही उसका शिल्प-विधान कहलाता है। किसी रचना की सृजन की आंतिक प्रक्रिया को ही उसका शिल्प विधान माना जाता है। कला कोई भी हो उसके शिल्प का विषय से अनिवार्य और चित्रण सम्बन्ध होता है। रचनाकार उचित शिल्पिक प्रयोग द्वारा अपनी बात नहीं इंग से कह सकता है।

किसी भी कलात्मक या साहित्यकृति की रचना-प्रक्रिया ही शिल्प विधि मानी जाती है। रचनाकार अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए जिस इंग का प्रयोग करता हैं, उसे शिल्प विधा के रूप में जाना जाता है। रचनाकार के मन में पहले से ही कोई निश्चित रूपसे या तथ्यमत आधार नहीं होते, होती हैं, उसके मन-मस्तिष्क में भाव और अनुभूति की घनीभूत प्रेरणा। शिल्प विधि के माध्यम से वह अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त के द्वारा तक ले जाता है, जहाँ उसकी रचना अलग अलग रूप धारण कर पाठकों तक संग्रहित होती है। शिल्प को रचनाकार की आंतिक प्रक्रिया माना जाता है। इस बात को स्पष्ट करते हुए श्री चिलियम वान ओ कानर महोदय कहते हैं - "शिल्प ही वह माध्यम है, जिसके कारण साहित्यकार की अनुभूति जो साहित्य का विषय हैं, उसे उसकी ओर ध्यान देने के लिए विवश करती है। उसके पास शिल्प ही ऐसा माध्यम हैं, जिसकी सहायता से वह अपने विषय की खोज, जोन-पड़ताल और विकास कर सकता हैं तथा इसका अर्थ समझते हुए उसका मूल्यांकन कर सकता हैं।"। आगे वह कहते हैं - "जो साहित्यकार अपने विषय की
अत्यधिक शिल्पिक जॉँच-पड़ताल करने की क्षमता रखता है, वही ऐसे समृद्ध साहित्य को जन्म दे सकेगा, जिसका विषय अत्यधिक संतोषप्रद और जिनमें भरपूर अर्थ साम्भव होगा। शिल्प रचनाकार की एक आन्तरिक प्रक्रिया है, जिसकी उपादेयता का स्पष्टीकरण श्री कानर महोदय ने अपने उपयुक्त वक्तव्य में किया है। चित्तन मनन को शिल्प के माध्यम से साहित्य का रूप प्राप्त होता है। वह ऐसे अत्यधिक रचना प्रक्रिया हैं, जिसके कारण रचना का निर्माण होता है।

परिवेशगत तथ्य और घटनाओं अथवा सामग्री चयन ही रचनाकार की रचनाधारिता का आधार नहीं होती। प्राप्त सामग्री को क्रमबद्ध, संतुलित स्वरूप प्रदान करना भी आवश्यक होता है और यह कार्य शिल्प-विधि द्वारा किया जाता है। शिल्प रचना में स्थित घटना-प्रसंगों को एकसूचना, सृज्यवस्थिता के सूत्र में बंधता है, जिससे पाठकों को मर्मस्पर्शिता की अनुभूति होती है। शिल्प रचनाकार द्वारा चयनित सामग्री को पाठकों की अभिमुखति के अनुसार स्थापित भी प्रदान करता है। शिल्प के द्वारा ही मनोभावों की अभिव्यक्ति एवं साहित्य के स्वरूप की संरचना होती है। यह शिल्प का एक महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य है।

निष्कर्ष: शिल्प किसी भी साहित्य रचना का शरीर कहलाएगा। शिल्प का सम्बन्ध अनुभूति या संबंधन की अभिव्यक्ति के कुशलता से है। शिल्प से रचनाकार अपने दृष्टिकोण, आशय, उद्देश्य आदि की अभिव्यक्ति करता है। अतः साहित्य में शिल्प की अनिवार्यता स्पष्ट है। रचनाकार अपने भावों, अनुभूतियों और संबंधनों को शिल्प में ढालकर पाठकों तक पहुंचाता है। साहित्य के सम्बन्ध में शिल्प का सरल अर्थ यह लिया जा सकता है कि शिल्प जिसके माध्यम से रचनाकार साहित्य रचना में कलात्मक सौंदर्य की निम्पिति करता है। किसी कृति के समापन तक जो कुछ भी सर्जन की प्रक्रिया चल रही होती है, वही उसका शिल्पिक प्रवचन माना जाता है।
5.4 समकालीन कवियतियों की कविताओं का शिल्पगत सौन्दर्य :-

डॉ. मोहन अवसरी काव्यशिल्प की सैद्धांतिक व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि- "काव्य-विधान काव्य का विचार है। कविता करने की विधि से लेकर कविता समबन्धी गुण-दोषों का विश्विविज्ञान जान उसके भीतर आ जाता हैं और उस जान का आत्म - प्रकाश काव्य - शिल्प है।"25 "काव्य कृति के निर्माण में जिन उपादानों द्वारा काव्य का ढौंटा तैयार किया जाता हैं, वे सब काव्य के शिल्प तत्व कहे जाता है। शिल्प - विधि रचना की उन प्रमुखताओं का लेखा-जोखा है, जिनके आधार पर रचना मूर्त हो चुकी है अथवा विशिष्ट भंगिमा के साथ लेखनी द्वारा अवतरित होते हैं।"26

स्पष्ट है कि काव्य - शिल्प कविता की रचनात्मक प्रक्रिया या सृजन - विधि है। काव्य शिल्प के समानार्थक शब्द हैं - रचना विधान, शिल्प विधान, रूप रचना, रचना - कौशल, काव्य सौन्दर्य, अभिव्यक्ति - विधान, अभिव्यंजना सौन्दर्य आदि। अन्ततः "हर रचना के साथ वस्तु और शिल्प अविभाज्य रूप से सम्पूर्ण होते हैं। दोनों की समग्रता ही रचना की सृष्टि करती हैं।"27

कविता की धाराओं सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन तथा शिल्प की रूढिग्रस्तता की प्रतिक्रिया स्वरूप बदलती है। स्वातंत्र्यवाद एवं हिंदी कविता में जैसे विषय बदले, वस्तु बदली और कवि की जीवन दृष्टि बदली बैठे ही शिल्प के क्षेत्र में रूप विधान के नये आयाम भी विकसित हुए। कविता की समीक्षा के मानदंडों में एक बारगी गुणान्तर आया और नये धारित पर कविता की इमारत खड़ी की गई। कवि की अनुभूतियाँ नये अप्रस्तुतों और प्रतीकों को खोज़ते - खोज़ते कविता के शिल्प क्षेत्र को समृद्ध किया।

समकालीन हिंदी कवियतियों ने भी अपनी कविताओं द्वारा भाषा-संस्कृति संबंधनों को संप्रेषित करने के लिए निःश्लेषित शिल्पगत विधानों को अपनाया है।

5.4.1 प्रतीक विधान
5.4.2 विम्ब विधान
5.4.3 अलंकार योजना
5.4.4 कविता की भाषा

5.5 प्रतीक विधान :–

अप्रस्तुत को प्रस्तुत करने के लिए प्रतीकों का आधार लिया जाता है। प्रतीक ही वास्तव में काह्न को संपूर्णता रूप प्रदान करते हैं। जीवन का ऐसा अप्रकट सत्य, जिसकी अभिव्यक्ति में अन्य अभावों से दूरी की जा सकती, उसकी अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकों का अवलोकन लेकर अप्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष करने का कार्य किया जाता है। जीवन के ऐसे अनेक सन्दर्भ होते हैं, जो अभिव्यक्ति के लिए अवश्य दुरूप हो जाते हैं। इन दुरूपतियों को अलग कर अप्रकट सत्य को सरलीकृत करने के लिए प्रतीकों का निर्माण किया जाता है।

अभिव्यक्ति की संक्षिप्तता प्रतीक है। “प्रतीक ’ शब्द प्रति-इक से निष्प्राप्त हुआ है, जिसका अर्थ है। ‘ अपनी ओर झुका हुआ ’। जब किसी बस्तु का कोई भाग पहले गोचर होता है, फिर आगे उस बस्तु का ज्ञान हो तब उस बस्तु को प्रतीक कहते हैं।”

“प्रतीक शब्द प्रति पूर्वगमनार्थक ‘इण’ धातु से बना है। गति गमनम्, गति:प्रासि, गतिन्ताम अनुसार उसका अर्थ चलना, प्रासि, या पहुँचना और जान होता है। प्रतिइणऽक्रणऽस्वार्थैन। प्रति इण (गतो) में ‘इण’ का शेष रह जाएगा। इसमें क्रिया प्रत्यय और दीर्घक्षण से प्रतीक बन जाता है। फिर स्वार्थ कप प्रत्यय के योग से प्रतीक शब्द सिद्ध होता है। इस सिद्धि के अनुसार प्रतीक का अर्थ हुआ वह बस्तु जो अपनी मूल बस्तु में पहुँच सके अथवा वह मुख्य चिन्ह जो मूल का परिचयक हो।”

प्रतीक का शास्त्रिक अर्थ है - “अवयव, अंग, पताका, चिन्ह, निधान।” प्रतीक अवयव का प्रयोग उस दृश्य अथवा अगोचर बस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य, अगोचर या अप्रस्तुत विषय का प्रति विधान उसके साथ अपने साहचर्य के
कारण करती हैं अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर की समान रूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर का प्रतिनिधित्व करनेवाली वस्तु प्रतीक है। अमूर्त अदृश्य अथवा अप्रस्तुत विषय का प्रतीक प्रतिनिधित्व, मूर्त दृश्य, अथवा प्रस्तुत विषय द्वारा करता है। जैसे अदृश्य या अथवा ईर्षय द्वारा अथवा व्यक्ति का प्रतिनिधित्व उसकी प्रतिमा या अन्य कोई वस्तु कर सकती है।”

5.6 परिभाषाएँ :-

(I) इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार - "symbol the term given to a visible object representing to the mind the symbols of something which is not shown but realized by association with it.”

(II) रामचन्द्र शुक्ल जी के अनुसार - "प्रतीक का आधार सादृश्य या साधम नहीं बल्कि भावना जागृत करने की निहित शक्ति है। अलंकार में उपमान का आधार सादृश्य या साधम ही माना जाता है। अतः सब उपमान प्रतीक नहीं होते, पर जो प्रतीक होते हैं, वे काय्य की बहुत अच्छी सिद्धि करते हैं।"

(III) डॉ.प्रेमनारायण शुक्ल प्रतीक की अर्थचिन्ह मानते हैं और उनका कथन है - "प्रकृति के विचित्र उपादानों, स्वरूपों के साथ नैस्थिक परिचय के कारण हमारा रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। यह सम्बन्ध जब तक हदस्थ स्थिति है तब तक उसकी अमूर्तांवस्था रहती है। किन्तु जब हम प्रकृति के पदार्थों का प्रयोग अपनी भावाभिव्यक्ति के साथ करते हैं, तब हम उस रागात्मक सम्बन्ध का मनोमूर्तिकरण कर देते हैं। शब्दों के इसी प्रकार के प्रयोग का नाम प्रतीक है।"

(IV) डॉ.सुधीन्द्र प्रतीक के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं - "प्रतीक वस्तु: अप्रस्तुत की समस्त आत्मा या धर्म या गुण का समस्तित रूप लेकर आनेवाले प्रस्तुत का नाम है। प्रतीक अप्रस्तुत का प्रस्तुत रूप में अवतार ही है।"
(V) डॉ. लक्ष्मी नारायण सुधांशु का मत है: "प्रत्येक भाषा में कुछ ऐसे शब्द होते हैं, जिनसे केवल अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती वरन् भावनाओं का उद्देश्य होता है। जिन वस्तुओं में तनिक भी निजी विशेषता पूर्ण आकर्षण तथा जिन पर दीर्घ सांस्कृतिक बासना का प्रभाव पड़ा है, वे शब्द हमारे काव्य में प्रतीक का काम करते हैं। प्रतीकों के स्वरूप पर कुछ न कुछ ऐसी व्यंजना रहती हैं, जिनसे भावनाओं के विकास संकेत मिलते हैं।"36

(VI) डॉ. कैलाश वाजपेयी का मत है: "प्रतीक विस्तार का संकेषण में कहने का माध्यम है।"37

इन परिभाषाओं से जात होता है कि इन प्रतीक अभिव्यंजना की एक सशक्त पद्धति है। इसलिए साहित्य में और विशेषतः कविता में, प्रतीकों के प्रयोग की महत्ता अंदिर्घ है। प्रतीकों के प्रयोग से साहित्य में कम से कम शब्दों के द्वारा अधिक से अधिक वस्तु की भावनाशाली द्रष्टा से अभिव्यक्त करना सम्भव होता है। उनके द्वारा ऐसी अनुभूतियों, अवधारणाओं और पदार्थों को अभिव्यक्त कर पाना सम्भव हो जाता है, जिन्हें अन्यथा अभिव्यक्त ही नहीं किया जा सकता। मनुष्य के आन्तरिक और वात्स्य जीवन के जो अनेक रहस्य हैं, वे प्रतीकों के द्वारा ही अभिव्यक्त होकर गोचर बन पाते हैं। साहित्य में रचनाकार अपने विशिष्ट, सृष्टि और कभी कभी जटिल अनुभवों को प्रायः अभिव्यक्त करता है। इसलिए, जब वह अभिव्यंजना के नवीन साधनों की खोज में निकलता है, तब वह नये नये प्रतीकों की योजना करता है।

5.7 प्रतीक के भेद:–

प्रतीक की प्रकृति, स्वरूप इत्यादि का अनुभावन करते हुए प्रतीक के भेद निम्न प्रकार से हो सकते हैं -
5.7.1 सांस्कृतिक प्रतीक :- (पौराणिक, धार्मिक और ऐतिहासिक)

सांस्कृतिक प्रतीकों से तालय उन प्रतीकों से हैं, जो सांस्कृतिक, धर्म और इतिहास के ख़ोटों से गहराई किए गए हैं। ये ख़ोट केवल भारतीय सांस्कृतिक, धर्म और इतिहास तक ही सीमित नहीं हैं। “नये रचनाकार वैदिक अध्यवस्थील और प्रवृत्त विद्वान अतः विदेशी सांस्कृतिक, धर्म और इतिहास से सम्बन्धित कई प्रतीक भी उनके काव्य में प्रयुक्त हुए हैं। अधिकांश नए कवियों का आयो व्यापकता की ओर है और इसीलिए मनु से लेकर ईश तक के प्रतीकों का उपयोग कविता में हुआ हैं।”

इस सन्दर्भ में कुमारी रमासिंह की ये पंक्तियाँ दृष्टिगत हैं:

"सुख का यह कंचन मूग
छलता हैं, छलाता हैं
मन का धनुधर यह
हाथ से कुटल कमान
तनिं दोर पर
धरे तुकीले बान
पीछे पीछे उसके ही चलता हैं चलता हैं
चमकिला स्वर्ण चर्म धाने के मचलता है।
मन ने जब पीछा किया
उस मृग छौने का
होने का क्षण था वह
kूपद अनहोने का
tभी तभी शान्ति सहजरी हुरी गई
tभी से समाई
यह विषम विकलता है।"
उक्त कविता में कंचन मृग, धनूधर, मृग छीना ये शब्द सांस्कृतिक प्रतीकों से जुड़े हैं। रामायण में कंचनमृग का प्रयोग जो अर्थ देता है, वहाँ से केवल यह शब्द उठाकर आज के समाज को प्रभावित किया है। ऊपर के शब्द परम्परागत होते हुए भी आज के अर्थ बुद्धिमान समाज के चित्रण को, उसकी अनुकूल शक्तिहीनता और विपल्लता के साथ अभिव्यक्त कर सकने में पूर्ण समर्थ है।

5.7.2 मनोवैज्ञानिक प्रतीक :-

फ्रायकीय मनोविज्ञान से प्रभावित यौन प्रतीकों को भी अजेय ने विशेष महत्व दिया है। उनकी सावन में, सो रहा है झील, जब पपीहे ने पुकारा आदि कविताएँ ऐसे ही प्रतीकों से युक्त है। इस सन्दर्भ में प्रतीक प्रकृति से भी गृहित किए गए हैं और अन्य उपकरणों का भी प्रयोग किया गया है। अजेय ने यौन प्रतीकों से उन (यौन) भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान की है। जैसे -

"सो रहा हैं झोप ओँधियाला
नदी की जँच पर
ढाह से सिरही हुईं यह चौंदनी
चोर पैरों से उशककर
श्वेक जाती है।"[40]

5.7.3 प्राकृतिक प्रतीक :-

कवि ने सभी युगों में प्रकृति से प्रतीक ग्रहण कर काव्य-चेतना को सुरुचिपूर्ण बनाने की चेष्टा की है। नया कवि भी प्रकृतिक उपकरणों के प्रयोग से अछूता नहीं रहा है। "प्रकृति से गृहित प्रतीकों का उपयोग उसने अपने मन - प्राणों की आशा - निराशा उत्साह, घुटन तथा प्रणय भावनाओं के अभिव्यक्ति प्रदान करने में किया हैं और एक बड़ी सीमा तर इसके कारण वह अपनी रचनाओं में सप्राणता और मोहकता ला सका है।"[41]
आधुनिक कविता के रचनाकारों ने अत्यंत अलंकृत शब्दावलियों में प्रकृति की 
अभिव्यञ्जना की हैं -

"फूल लाया हूँ कमल के 
क्या कहें इनका 
पसारे आप आँचल 
छोड़ दूँ नहीं जी हल्का।"\(^{42}\)

5.7.4 कलात्मक प्रतीक :-

नए कवि ने कलात्मक प्रतीकों के सन्दर्भ में भी खूब प्रयोग किए है। नए कवियों 
की नव्य-शिल्प कुशलता कलात्मक विभिन्न्क का निर्माण करने में भली प्रकार प्रतिष्ठित 
हुई है। नये कवियों की रचनाएँ कलात्मक दृष्टि से सर्वोपरि है। क्योंकि इनमें शिल्प का 
विशेष आयत्र है। इसी कारण कुछ नवीन कलात्मक प्रतीकों का सफल निर्माण हुआ है। 
आज की निराशा और पराजय और साहस के कुंडित हो जाने के कवि ने युग जीवन 
की वस्तुस्थिति के परिवेश में भली प्रकार प्रस्तुत किया है। कलात्मक प्रतीकों के 
विभाग में मदन वात्यायन का नाम उल्लेखनीय है। यथा -

"ऊनी रोएँदार लाल पीले फूलों से 
सर से पौंच तक झका हुआ 
मेरी पत्नी की गोद में 
छोटा सा गुलदस्ता है।"\(^{43}\)

बड़े का सुंदर प्रतीक इस कविता का सौन्दर्य है।

5.7.5 मौलिक और वैयक्तिक प्रतीक :-

जहाँ कवि अपनी प्राचीन परम्परागत मान्यताओं को त्यागकर स्वतंत्र रूप से 
अप्रस्तुत अर्थ के बाव संबंधन के लिये वैयक्तिक अर्थ में प्रस्तुत की ग्रहण करता है। वहाँ
मौलिक या वैयक्तिक प्रयोग प्रतीक का होता है। बावरा अहेरी, सूर्य का, ठण्डा लोहा, विफलता का, अंधायु - अनास्था का, संशय की एक रात - क्षण बोध, अंतर्दृश्य का प्रतीक बनाकर शीर्षक रूप में प्रसुत हुए हैं। क्योंकि देवता इन प्रतीकों के कृत्य कर गये हैं। आवश्यकता तो प्रत्येक शब्द में नया अर्थ भरने की है।

"प्रात धूप की जरतारी ओढ़नी लपेटे
अभी अभी जायी खुमार से भरी

नितान्त कुमारी घाटी
इस कामातुर में धूम के
उष्चक आलिंगन में पिस कर
रति थांता सी मलिन हो गई।"44

प्रस्तुत कविता में कुमारी घाटी का प्रतीक अविवाहित नवयोगवनना के रूप को स्पष्ट करता हैं और कामातुर में आलिंगन के द्वारा जो मलिनता रति क्रिया में कुमारी को भोगनी पड़ी हैं, उसका चित्रण यौन अंत में प्रतीकों के रूप में क्रिया गया है।

निष्कर्षः प्रतीकों की अधिकता या कमी प्रतीकार्य की जटिलता या सपाटता किसी कवि या किसी काव्य प्रवृत्ति की काव्यानुशृति की सामूहिकता या वैयक्तिकता, सरलीकरण या विशिष्टता जटिलता या सपाटता की दृष्टि क्रम है।

5.8 समकालिन कविताचित्रों की कविता में प्रतीक विश्लेषण -

समकालिन हिंदी कविताचित्रों भी मानवीय संबंधताओं को अभिव्यक्त करने के लिए अपनी कविताओं में प्रतीकों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। जो निष्प्रकार हैं-।

कविताचित्र डॉ.प्रमो नागरकोटा जी ने अपनी 'दर्द की सृष्टि' कविता में हरदय में उत्पन्न होनेवाली दुःखात्मक संबंधताको प्रतीकात्मक रूप में इस प्रकार व्यक्त किया हैं-।
"हदय में
आशाओं के नहें-नहें फूल
खिल रहे हैं-
न जाने कौन-से
नये दर्द की
सृष्टि हो रही हैं.......!

प्रस्तुत कविता में कवियिने फूलों को आशाओं का प्रतीक बनाकर यह कहना चाहती है कि मन में एक ओर सुख या आशाओं जैसे छोटे छोटे फूल खिल रहे हैं तो दूसरी ओर नये दर्द की सृष्टि भी हो रही है। अर्थात् कवियिने का मानना है कि मन में जब आशाएं जागृत होती हैं, तो उन्हें आशाओं के साथ साथ दुःख भी पैदा होता है। अर्थात् जब वे आशाएं टूट जाती हैं या पूरी नहीं होती तो दुःख का आना स्वामाजिक है।

अपनी 'विवशता' कविता में भी कवियिने खी के दुःख को प्रतीक्तक प्रीति में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है -

"धूपदानों में कभी सजकर
कभी दीवार का सुराख
कोने में अगरबत्ती
क्योंकि जलकर गन्ध देती हैं
जलेगी ही प्रतिदिन......
दग्ध होगी ही.....
यही हैं अनिवार्य सार्थकता चरम
विवशता भी यही तो है।"
और कहौं को सहते हुए भी वह दूसरों को खुशी देती हैं और अपने परिवार के लिए ही वह अपना पूरा जीवन समर्पित कर देती है। कवयित्री की यह प्रतीकात्मकता सुन्दर बन पड़ी है।

जीवन में सुख या आशा की भावना जागृत करने के लिए प्रेरणा देते हुए कवयित्री अनामिका तिवारी जी अपनी ‘मन का दीप जला’ कविता में कहती है कि -

"माटी के दीप जलाये बहुत तुर्ने
रे मन, मन का दीप जला।

***************

स्वार्थ का घेरा हैं, दर्प का डेरा हैं
मोह का बसेरा हैं माया का सबेरा हैं।

जी का जंजाल मिटा !

रे मन, मन का दीप जला।"47

कवयित्री ने बहुत ही मार्मिक दंग से मानव को समझाने का प्रयास किया हैं कि हर तरफ स्वार्थ का, दर्प का, मोह और माया का ही बोलबाला है। इसीलिए तुम माटी के दीप की जगह मन के दीप जनाओ। अर्थात् कवयित्री ने इन चुनित भावनाओं से सचेत रहने के लिए आगाह किया है।

खैर के आत्मसम्मान के सम्बन्ध में कवयित्री सुजाता शिवेन जी ‘प्रतिदान’

कविता में लिखती है कि -

"मेरे ऊपर
पर अफसोस
कि मेरे आँचल में
एक छेद हैं स्वाभिमान का
और मैं इसमें

291
पैबंद लगाना नहीं चाहती।”
प्रस्तुत कविता में कवयित्री खृष्ण संवेदना की य्वक्त करते हुए कहना चाहती है कि खृष्ण पुरुष की दया, करुणा और एहसान के बोध से लदी हुई नहीं रहना चाहती है। इसीलिए उसके आँचल में एक छद्र है जिसे स्वाभिमान कहते हैं, उस छद्र पर खृष्ण पैबंद नहीं लगाना चाहती। अर्थात् खृष्ण अपना जीवन पुरुष की दया पर ना जीकर अपने स्वाभिमान के बल पर जीना चाहती है। यहाँ ' आँचल में छद्र ' शब्द प्रयोग उल्लेखनीय है।
आधुनिक युग में मनुष्य के सम्बन्धों में जो अलगाव की भावना आयी है, उसे कवयित्री सुजाता शिवेनजी ने अपनी 'रिश्ता' कविता में प्रतीकात्मक रूप में इस प्रकार य्वक्त किया है –

"छद्र पर
दीवारों के सहारे
बाहर की तरफ
टंगी थी वह खाट
जरूरत तो थी उसकी
पर अन्दर
नहीं थी जगह
जरूरत और गैर-जरूरत के
बीच
शूलती हुई वह
खाट
मुक्के ऐसे ही
शूले हुए कुछ रिश्तों की
याद दिलाकर
अन्दर कही कचोट गई।”49
कवियत्री ने खाट की प्रतीक बनाकर मानाबीय सम्बन्धों में जो दूरियाँ आ गयी हैं, उसका सजीव चित्रण किया है। जिस प्रकार खाट की आवश्यकता होने पर भी घर के अन्दर जगह ना होने पर उसे बाहर रख दिया जाता है, उसी प्रकार मानव भी अपने जीवन में कुछ रिश्तों की आवश्यकता होने पर भी कुछ अनिवार्य कारणों से उन रिश्तों से दूरी बनाये रखता है।
कवियत्री रंजना जायसवाल जी अपनी ‘माइस’ कविता में सामाजिक अव्यवस्था के प्रति क्रांति लाने में असफल होने के प्रति अपना क्रोध व्यक्त करते हुए कहती हैं कि -
"सुविधाओं की नमी से
सीलन लग गई हैं
तुम्हारे विद्रोह की माइस में
बारूदी तीलियाँ
नहीं कर पाती अब पैदा
चिनगारियों||50
कवियत्री का लघु कहना है कि जिस प्रकार माइस में पानी पिरता है तो माइस की तिलियों में नमी आ जाने से उससे चिनगारियाँ नहीं निकलती, उसी प्रकार आज के मनुष्य को इतनी सुविधाएँ मिल गयी हैं कि उसकी विद्रोह रूपी माइस नम हो गयी हैं और उसका विद्रोह चिनगारियों पैदा नहीं कर पा रहा है। अर्थात समाज में जागृति उत्पन्न नहीं कर पा रही है।
आधुनिक काल में सन्तान का अपने पिता के प्रति जो उपेक्षा की ‘भावना
जागृत हुई हैं, उसे शवद्वद रखते हुए कवियत्री रंजना जायसवाल जी अपनी ‘पिता हैं
पेड़’ कविता में कहती हैं कि -

293
"हवा में
उड़ रहे हैं पत्ते
पेड़ बिचक और चुप
देखन को अभिशास।"51

इस पंक्तियों से स्पष्ट है कि जिस प्रकार पेड़ अपने पत्तों को गिरता देखकर भी कुछ नहीं कर पाता, उसी प्रकार एक पिता भी अपने से दूर होते समय को देखने के लिए विचल है। सन्तानों को अपने पिता की कोई बिल्ला नहीं है। वे उनकी उपेक्षा करते हुए, दूर जा रहे हैं।

इसी उपेक्षा की भावना को जया जादवानी जी अपनी 'द्वार कविता' में प्रतीकात्मक शैली में इस प्रकार अभिलक्षित किया है -

"मैं सिर्फ द्वार हूँ, जिनमें
तुम्हारी उम्मीदें, आशाएँ
प्रवेश पाती हैं
और गर्म धारण कर लौट आती हैं
और द्वारों का क्षय
वे कभी भी बंद किये जा सकते हैं।"52

कवित्री का आशय यह है कि खैर पुरुष की दृष्टि में केवल एक द्वार के समान है। पुरुष उस द्वार के द्वारा अपनी उम्मीदें, इच्छाएँ, लक्ष्य सभी प्राप्त करता है। लेकिन उस द्वार के बारे में नहीं सोचता जिससे उसे इन उपलब्धि दिलाने में सहायता की थी। वह उस द्वार को अपनी इच्छा के अनुसार बंद कर देता है। अर्थात पुरुष, खैर को अपने लाभ के लिए उपयोग करके उसकी उपेक्षा कर देता है।

कवित्री वीरा 'छोटा सुख' कविता में अपने सुख को इस प्रकार व्यजित की है -
"बहुत छोटा था मेरा सुख
एक बूःद की तरह
कि एक सीप में
अगर बन्द हो जाता
तो मोती - सा बनता ||”53

कविता का कहना है कि उनका सुख एक बूःद की तरह था अगर वह सीप में बन्द हो जाता तो मोती बन जाता था। अर्थात अगर उनकी इच्छा, योजनाएं और आशाएं पूरी हो जाते तो वे सुख में परिवर्तन होकर जीवन को सुखमय रंगों से भर देते।

कात्यायनी जी ‘आँध्री में नाचते हैं तितली’ कविता में संसार में अशान्ति को उत्पन्न करनेवालों का चित्रण-प्रतीकात्मक शैली में इस प्रकार व्यंजित किया है -

"शूल भरी आँध्री में उड़ती
एक रंगीन तितली -
शायद कोई भुला दी गयी धुन।
यह नाजुक हैं, सुन्दर हैं
और हमें उकसा रही हैं
बर्बरता के विरुद्ध।
यह तितली हैं
तो होंगे तूफानी पितरवेल भी
और गर्वीले गहरा भी
यही कहीं हमारे पास।”54

कात्यायनी जी का मतन्त्र है कि तितली शान्ति का प्रतीक है। इसीलिए वह संसार के युद्ध, धर्म, जाति, प्रश्न व्यवस्था जैसे बर्बरता के विरुद्ध हमें लड़ने के लिए.
उकसा रही है। लेकिन दूसरी ओर पितरेल और गरूड जैसे स्वार्थी लोग भी हैं जो सभी प्रकार के बर्बरता को प्रीतसाहन दे रहे हैं। अर्थात् कवित्री का कहना है कि एक और तितली जैसे व्यक्ति समाज में जागृति उत्पन्न करने का प्रयत्न कर रहा हैं तो, दूसरी ओर गरूड और पितरेल जैसे बुरे लोग संसार में अशान्ति फैलाने में व्यस्त हैं।

क्रुणापरक संवेदना को व्यक्त करते हुए कवित्री इन्दु अगरवाल जी 'हादसे' कविता में कहती हैं कि -

"कोई हादसा तो इतना
जबरदस्त होता कि
तन-मन के साथ
आत्मा-कुचलने दौड़ पड़ता
तब कोई मलयानिल हवा
कृष्ण ! बनकर आती और
धरती पर पड़ी कृष्णा को
जीवन का चीर दे जाती।"55

प्रस्तुत पंक्तियों में कवित्री ने अत्याचार जैसे हादसे का शिकार हुई एक खै का वर्णन करते हुए कहती हैं कि जब खै ऐसे दुःखखरक घटना का शिकार होती हैं तो मलयानिल अर्थात् हवा कृष्ण बनकर उस हादसे का शिकार हुई खै पर जीवन जैसा चीर (साइडी) देकर उसके मान की रक्षा करती हैं। अर्थात् कवित्री चाहती हैं कि अत्याचार के शिकार हुई खै के प्रति क्रुणा व्यक्त करने के साथ-साथ उसके मान की रक्षा करना भी प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। कवित्री ने खै के शोचनीय स्थिति के प्रति क्रुणा व्यक्त करने में सफल हुई है।

अपनी 'प्रशंसित बातावरण' कविता में मानवेतर प्रेमपरक संवेदना के अन्तर्गत प्रकृति का सुन्दर चित्रण इस प्रकार किया है -

296
"अमराई में गाये कोयल
अलि करे बगिया में गुंजन
जाये न जब तक बसन्त
इन्हें इसी तरह बढ़कने दो
रहने दो प्रशमित वातावरण
कोई गीत सुरों में ढलने दो।"56

करुणा की भावना को कवयित्री डॉ. सुषमा प्रियदर्शिनी जी अपनी 'कटी पतंग'
कविता में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है -

"दोबारा उड़ नहीं पाईंगी कभी
बिजली के तारों में उलझी
भावनाओं और संवेदनाओं से टूटकर
बिखारित पीड़ा के थपेड़ों से
तार-तार हो चुकी हैं
शायद यही मेरी नियती थी।"57

प्रस्तुत कविता में कवयित्री ख़री के करुणाजनक स्थिति को एक कटी पतंग से
तुलना करते हुए कहती हैं कि - जिस प्रकार एक कटी पतंग की कोई दिशा नहीं होती
और वह बिजली के तारों में उलझकर तेज तूफानों के थपेड़े खा खाकर बिखर जाती
हैं, उसी प्रकार ख़री भी अपने जीवन में इतना दुःख और संकटों का सामना करके वह
भी भावनाओं में उलझ गयी है। भावनाओं और संवेदनाओं से रित्त होकर जीवन में
दुःख और कष्टों रूपी थपेड़ों को सहते हुए वह भी बिखर कर तार तार हो गयी है।
वह सोचती हैं कि यही उसकी नियती है। कवयित्री ने यहाँ पर पतंग को प्रतीक के रूप में
प्रयोग करके ख़री के सोचनीय स्थिति का हदयस्पर्शी वर्णन किया है।

निष्कर्ष रूप से इन सभी कविताओं पर ध्यान देने से जात होता हैं कि
समकालीन कवयित्रियों ने प्रतीकों का सफल प्रयोग किया है। कवयित्रियों ने मानवीय
संवेदनाओं के साथ साथ अपने मन के भाव, विचार, संकल्पनाएँ, मंतव्य और प्रतिबन्धकों को पाठकों तक पहुँचाने के लिए प्रतितीकों सभी प्रकार और विधानों का प्रयोग करने में सफल हुए है। प्रतीकों का प्रयोग तो भाव को स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। इस कार्य में कविताओं को सफलता मिली है।

5.9 बिम्ब विधान :-

बिम्ब अंग्रज़ शब्द इमेज का पर्याय है। इमेज से अभिप्रय हैं, ऐसी सचेत स्मृति का जो मूल उद्देश्य की अनुस्थिति में किसी अनुभव का समग्र अथवा अंश रूप में पुनरुत्पादन करती है। इमेज का हिंदी (संस्कृत) रूपांतर है बिम्ब, जिसका शब्दार्थ है - 'पूर्व-चन्द्र मण्डल, प्रतिच्छिन्न, प्रतिच्छिथा, प्रतिच्छिथित अथवा प्रत्यांकित रूप, चित्र।' हिंदी आलोचना में शुक्ल के द्वारा सर्वप्रथम इसका प्रयोग हुआ और काव्य में प्रकृतिक दृश्य के अन्तर्गत इसकी विवेचना की गयी। हिंदी में सर्व प्रथम यह रूप-विधान और चित्र-विधान के समकक्षता की कोटि का माना गया। रूप और चित्र के लिये नया शब्द ग्रहण हुआ बिम्ब। प्रारम्भ में यह उपभाषा और अप्रस्तुत के गोद का था। लेकिन नयी कविता में इसे सर्वत्र स्वतंत्र रूप में ग्रहण किया गया।

5.10 बिम्ब की परिभाषाएँ ::

विद्वानों ने बिम्ब को अनेक प्रकार से परिभाषित किया हैं - यथा -

"1. काव्य-बिम्ब एक प्रकार का भाव गमित शब्द चित्र है।" 

"2. बिम्ब ऐन्त्रिक अनुभव द्वारा आध्यात्मिक एवं मानसिक सत्यों तक पहुँचने का मार्ग है।" 

"3. बिम्ब पदार्थों के अतिरिक्त सादृश्यों की अभिव्यक्ति है।" 

"4. जो मूल वस्तु प्रतिद्वंद्व या छाया फंकती हैं, शाक्तिय भाषा में वही बिम्ब कहलाती है।"
"5. विम्ब पदार्थ नहीं, वरन उसकी प्रतिकृति या प्रति छवि है। मूल सृष्टि नहीं पुनः सृष्टि हैं... विम्ब एक प्रकार का चित्र हैं, जो किसी पदार्थ के साथ विभिन्न इन्द्रियों के सत्कार से प्रमाण के चित्र में उद्वृढ़ होता है।"64

इस प्रकार विम्ब भावों को रूप देता है। किसी वस्तु का मानस-चित्र अथवा कल्पना चित्र ही विम्ब है। जगत की वस्तु को कवि यथार्थ रूप में देखकर अपनी ओर से रूपक, उपमा आदि के सहारे जब उसको एक नया रूप देता हैं, तो वह नया रूप विम्ब कहलाता है। विम्ब का अर्थ शब्द चित्र से भी लिया जाता है। विम्ब के द्वारा ही कविता में संक्षिप्तात्व, वास्तविकता की प्रतिगुण, थोड़े में बहुत का बोध अनेक अर्थों की सम्भावना आदि सम्भव है।

5.11 विम्ब के प्रकार :-

विम्ब का सम्बन्ध मात्र कविता से ही नहीं हैं, वरन् वह मनोविज्ञान का भी एक अंग है। विम्ब में भेदगत स्थितियों को पूछतां यानि उसके सीन्दर्य को नष्ट करना है। सी.डी.टीविस का कथन हैं, “विम्ब काव्य की रचना प्रक्रिया से इतने घनिष्ठ संयुक्त होते हैं कि उन्हें कविता से अलग करके उनके भेदों प्रभेदों की चर्चा करना समीचीन नहीं है।”65

काव्य के अन्तर्गत मनोविज्ञान और भाषा विज्ञान का विम्ब क्षेत्र में प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस दृष्टि से काव्य में विम्ब विभाजन का स्वरूप निष्ठ प्रकार भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

5.11.1 ऐन्जिक विम्ब :-

(अ) दृश्य विम्ब :- दृश्य का सीधा सम्बन्ध आँख से होता है। यह सबसे अधिक व्यापक और प्राच्य है। जैसे सुगन्ध, आस्वाद, स्पर्श आदि वस्तुओं का एक दृश्य (आकार) पक्ष भी होता है। यह विम्ब अपनी व्यापकता में सर्व प्रमुख है। जब शुद्ध विम्ब की कोटी में आता हैं, तो मात्र एक चित्र फलक के रूप में होता हैं। परन्तु जब
उपमान के साथ प्रयुक्त होता हैं, तो एक साथ कई मूर्त और अमूर्त चित्रों को मानस में उद्दासित करता है।

"ताल पुराना
कूदा दादर
गुड़प ||"66

प्रस्तुत कविता उपमानों से विहीन है। एक मेंढक का जल में कूदने का एक दृश्य है और वह कूदते ही गायब हो जाता है। इसमें ताल और मेंढक चाशुक विभ्य हैं और गुड़प का शब्द श्रवण संबंधित है। साथ ही कूदा क्रिया का चित्तलेखाला रूप भी दृश्य विभ्य का ही चित्र है।

(आ) शब्द विभ्य :- इसका समबन्ध कान से है। किसी पदार्थ से उठनेवाली आवाज़, किसी की वोली, वाद्य वंच की तान, लय, स्वर, आभूषण, ओज्ज़ारों और वस्तुओं के अनुकरण आदि से यह विभ्य समबन्धित है।

"हहर - हहर पहराया
काला बादल
लेकिन पहले आया
शब्दः
जाने कहाँं कहाँं की धूल का
स्वर लाया सर सर पीपल का
मर्मर कब्जार के झाऊं का
खंड खंड पलास का अमलताश का
और झरा रेशम शिरीश के फूल का ||"67

अजेय की यह ' वैशाख की ओँधी ' कविता में ओँधी के उठते हुए रूप की मंथरता है।
(इ) स्पर्श बिंब - इसका सम्बन्ध त्वचा से है। पदार्थों की तापमान गत स्थिति और साथ ही उनकी शारीरिक कोमलता, कठोरता, चिकनाहट, खुरदरपन आदि संवेदनाओं को इसी इन्द्रिय के माध्यम से जाना जाता है। किसी ऋतु का, किसी पदार्थ का तथा किसी उपकरण का स्पर्शी भाव मन में लाना ही इस प्रकार के बिंबों का कार्य है।

"लिपटा रजाई में
मोटे तकिये में घर कविता की कापी
ढंढ़क से अब्ज़ी उंगलियों से कलम पकड़
मैंने इस जीवन की गली गली नापी।" 68
जाड़े की शीत और रजाई की ऊपरा के दो स्पर्श बिंब स्पष्ट प्रतीत होते है।

(ई) गन्ध बिंब - गन्ध बिंब का सीधा सम्बन्ध नासिका से है। गन्ध बिंब सम्बन्धी चित्र अधिक नहीं मिलते। प्रकृति से उत्पन्न पदार्थों की महक, होटलों में अनेक प्रकार के जलते-भुनते पदार्थ, द्रू, तैल आदि की दुकानों में उड़नेवाली बास वर्षा ऋतु में धरती से उड़नेवाली सांधी महक आदि से संवेदना का साधारण नासिका किया ही करती है।

(उ) आस्वाद बिंब - आस्वाद बिंब का सम्बन्ध जिह्वा से है। इसके लिये कब्र भोजन, फल आदि का सहारा लेते रहे है। आस्वाद बिंब के साथ ही ग्राम संवेदना का भी बिंब छिपा रहता है। कभी आस्वाद बिंब उभर कर प्रवर्त हो जाता हैं और कभी ग्राम। लेकिन खाने पीने की वस्त्रों में मुख्य आस्वाद ही बिंब रहता है।

"कुछ शब्द से
कुछ खरा से
जहर से कुछ
और कुछ सिर्फ पानी से भरे हैं
शब्द मिट्टी के घड़े हैं।" 69
5.11.2 शब्द प्रधान बिम्ब :-

शब्द प्रधान बिम्ब में काव्य का अर्थ प्रयोजनीय नहीं होता। यह मात्र एक चित्र फेंकता है। शब्दों के माध्यम से कवि एक चित्र उपस्थित करके ओट हो जाता है। सृष्टि दर्शन और दृष्टि की पैगुम परख इस प्रकार के बिम्बों की योजना करती है। इस प्रकार के बिम्ब अधिकांश छोटी कविताओं में उपलब्ध होते हैं। कुछ शब्दों मात्र से एक बिम्ब की उपस्थिति ही कवि की सार्थकता है।

"गधा गधा हैं
घोड़ा घोड़ा हैं
भले ही लंगड़ा क्यों न हो।"70

वैजनाथ गुम की कविता लंगड़े घोड़े से गधे को छोटा समझती है। यह जीव जाति की स्थिति उनकी मनुष्य जाति की भी वर्ग-भेद की स्थिति है।

5.11.3 अर्थ प्रधान बिम्ब :-

अर्थ प्रधान बिम्ब प्रतीक बहुला कविताओं, अन्योक्तियों, वृद्धिकृतों, उलटबारियों किसी दर्शन के तकनीकी प्रयोगों की अर्थगम्ब स्थितियों में होते हैं। प्रतीक बहुला कविताओं का ध्वनित अर्थ जब तक सामने नहीं आयेगा तब तक बिम्ब का स्पष्ट रूप भी सामने नहीं बनेगा। अजेय की कविता हैं -

"इतिहास की हवा
मेरे चेहरे में बागड़ियों के झोपड़ों से झांकता हैं एकलव्य
द्वीपाचर्य अभिसभ्य करते हैं
मुनियों की व्याजहीन आँखों में
पोष्य राजहंस माला नीर-शीर करती हैं
लाला लाला मछिलियों पेटियों उलटकर दम तोड़ देती है।
मेरे चेहरे पर भोले बालकों का भवित्व विष्णु है।"71
प्रस्तुत कविता में कवि का दृष्टिबोध मानसिक बोध बनकर चेहरे पर छा गया हैं और उसका अर्थ सौरस्य अनुभव एकलय, द्रोणाचायर, राजहंस माला, लाल मछलियँ आदि प्रतीक उद्दातन पर ही सम्भव है। इस लम्बी कविता में अभ्य जातियों का प्रतिनिधि एकलय है, जिसने गुरु दक्षिणा में अंगूठा ही काट कर दिया तथा द्रोणाचायर कौरव पाण्डव के श्रेर शिक्षक है।

5.11.4 मुक्त आसंग बिब्व :-

यह बिब्व प्रणाली कवियों की बिब्ववाला का मुक्त आसंग के रूप में प्रत्यक्षीकरण करती है। इसका मुख्य केन्द्र हैं - फ्राङ्ड का उपचेतन विद्वान और व्यक्ति की दमित स्थितियाँ। फ्राङ्ड उपचेतन मस्तिष्क को मनुष्य की जात अजात स्मृतियों, अनवतमित वासनाये, चेतना स्थितियाँ और वे सभी मनोवृत्तियाँ जो समाज की नीतियों के कारण अनमित्यक्ति रह जाती हैं और वे कामबासना जन्म प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाती है।

"बुझी हुई राह, टूटे हुए गीत, डूबे हुए चाँद
रीते हुये पात्र, बीते हुए क्षण सा -
मेरा यह जिस्म।"72

शरीरगत और भावगत स्थितियों को स्पष्ट करने के लिए बुझी हुई राह, टूटे गीत, डूबे चाँद, रीता पात्र, बीता हुआ निराशावादी क्षण है। भावों की स्थिति उल्लास, जीवन संगीत, सौंदर्य, एक्शन शिशिल तथा सब कुछ समास हो जाने की निराशा जन्म भावनाओं का चित्रण है।

5.11.5 दिवा स्वप्प बिब्व :-

दिवा स्वप्प बिब्व योजना पूर्णत: बिगत अनुभवों की या भविष्य की कल्पनाओं की मानसिक प्रतिकृति है। नाटक में जो स्थान स्वप्प कथन का हैं, वही कविता में इस प्रकार के चित्तन का। जब कवि अपने बिगत अनुभवों को रामचंद्र या विश्वज्ञलित रूप
में वर्णन करता चलता हैं और अचेतन मन में पड़ी घटनायें बिना किसी तारतम्य के जुड़ती चली जाती हैं, तब दिवा स्वप्न विभ्र बनता है।

5.11.6 साहचर्य विभ्र :-

साहचर्य विभ्र की स्थिति दो रूपों में होती है।

(I) विभ्र का अनुभूति पक्ष और अभिव्यक्ति पक्ष सन्तुलित हो और यह अनिर्णित हो कौन सा पक्ष प्रबल है।

(II) प्रतिक के माध्यम से उभरनेवाला विभ्र (प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों ही माध्यमों से पुक विभ्र) समान धर्म हो और अपनी अपनी स्थितियों में पूर्ण हो।

इस विभ्र के उदाहरण में धर्मवीर भारती की चुम्बन कविता में है -

"रख दिये तुमने नज़र में बादलों को साधकर
आज माये पर सरल संगीत से निर्मित अधर
आरती के दीपकोंकी जिंद मिलाती छांह में
बांसुरी रबी हुयी ज्यों भागवत के पृष्ठ पर।"73

5.11.7 प्रकृति विभ्र :-

स्पष्ट हैं कि प्रकृति विभ्र, दृश्य विभ्र, वस्तु विभ्र या भाव विभ्र भी हो सकता हैं अथवा उसमें कलात्मकता भी खोजी जा सकती है।

नामवर सिंह की ये पंक्तियाँ दृष्टिव्य है -

"कामुकी शारू
अंसुरी उजास
बबरा में जंगली गंध का इलाका।"74

निष्कर्ष रूप में विभ्र के अनेक भेद हो सकते हैं। यों कहा जाय कि प्रत्येक शब्द ही विभ्र हैं और उनका निर्माण अनेक प्रकार से किया जा सकता है। किसी दृश्य वस्तु के आधार पर, किसी संवेदना की प्रतिक्रिया रूप में, किसी मानसिक विचारधारा या
धारणा के आधार पर, किसी विशेष अर्थ को द्वारा तित करनेवाली घटना के आधार पर और अनेकारूप द्वारा विम्ब के अनेक क्षेत्र और अनेक रूप है। काव्य का दश्य शब्द जितना व्यापक हैं, विम्ब भी उतना ही अपरिमित।

5.12 समकालीन हिंदी कवियतियों की कविता में विम्ब :-

विम्ब की दृष्टि से समकालीन हिंदी कवियतियों की कविताएँ समृद्ध है। कवियतियों ने मानवीय संवेदना और अपने भावों को स्पष्ट रूप देने के लिए अनेक सून्दर विम्बों का निर्माण किया है। जो निम्नप्रकार है।

कवितात्मक बदनामनीतिय जी ने अपनी 'शब्दकोश' कविता में प्रमपरक संलग्नता को व्यक्त करने के लिए प्राकृतिक विम्ब को इस प्रकार व्यक्त किया है -

"भावनाओं से लबरेजतितली के टूटे पंख से
उड़ते - फिरते हम दोनों को
अपना भी पता चहाँ
सागर के पर उड़ती हवाओं से दुलराई जाती
लहरे खुद ही कर लेपी सवाल - जवाब
लहरे और आकाश ही समस्त सकते हैं
इनका अर्थ इस भाषा से परिचित हैं
आदित्म काल से ये दोनों
हमारे तुम्हारे खतों से ही समृद्ध हैं
इनका शब्दकोश शायद।"75

प्रस्तुत कविता में प्रेमी और प्रेमिका के बीच प्रेम का आदान प्रदान करने के लिए प्रकृति माध्यम द्वारा हुई है। प्रेमी और प्रेमिका के मध्य जो पत्र व्यवहार होता है, उसे पढ़ने और उत्तर देने का कार्य प्रकृति कर रही है। प्रेमी और प्रेमिका तो अपने प्रेम भावना में मग्न हैं। उनकी मूक भाषा को प्रकृति ही समझ सकती है।
अनामिका तिवारी जी अपनी ‘एकान्त में’ कविता में एकान्त क्षणों के सुख की अनुभूति की अभिव्यंजित करते हुए कहती है कि -

"एकान्त क्षणों में
बजने दो सितार की झंकार
kा नींद के
और चलते चलो
इन्द्रधनुष के
झूलने वाले रंगीन पुल में
ओड़े बादर की चुनरियाँ
kरने दो पवन को मनानी
चमकने दो चाँद को मुख पर
बांध लो तारे अलको में
बजने दो रुन जुन - रुन जुन बिजली की पायल
बार बार चढ़ो उतरी गिरखुर्णों में।"76

कवित्री ने एकान्त क्षणों में प्रकृति के अंग कहे जानेवाले इन्द्रधनुष, बादल, पवन, चाँद, तारे बिजली और पर्वतोंके सैर करनें में जो आनंद, सुख और उल्लास की प्राप्ति होती हैं, उसका हदस्मशर्ति चित्रण किया है। कवित्री का यह चित्रात्मक वर्णन पाठकों को कल्पना की एक नई दुनिया में सैर कराकर लाता हैं, जो अद्भुत है।

कवित्री ने दुःखात्मक संवेदना को अभिव्यंजित करने के लिए प्रतीक्षा कविता में अपनी दयनीय स्थिति का चित्र खींचा है -

"धीरे - धीरे बढ़ रही थी तट से तरिणी की दूरियों
धुँधली पड़ती लगी चेरी दे की विच्छ आकृतियाँ
उमड़ - उमड़ बरसी जो नयन - मोती लड़ियाँ
कुछ देखी कुछ अनदेखी रह गई।"77
प्रस्तुत कविता में कवियत्री जब अपनाओं से दूर जाते हैं, तो उनमें जो दर्द की टीस उठती हैं, उसका मार्मिक चित्रांकन किया है। मनुष्य ऐसी परिस्थिति में दुःख सहने के लिए विवश हो जाता है।

जीवन संघर्ष और नीरस जीवन के सन्दर्भ में अनुराधा पाटिल जी ने अपनी ‘अदृश्य हाथ’ थे कविता में काल्पनिक चित्रण इस प्रकार किया है -

"अदृश्य हाथ थे कोई, जिन्होंने गुंगकर अपनी मिट्टी में चेतना भर दी थी।
और जगा दिया था यथार्थ का मान
लेकिन जीने के सन्दर्भ को चैरनेवाली विरूपता पॉंछ सके।
इतना भी बाकी नहीं रह जाता हैं, आण।" 78

कवियत्री का कहना है कि किसी अजात हाथों ने उनके जीवन में चेतना भर दी थी। जीवन की कठोर परिस्थिति में भी जीवित रहने के लिए साहस भर दिया था, जीवन की वास्तविकता को समझ दिया था। लेकिन जीवन की समस्याओं और उलझनों से संघर्ष करते करते वह इतना थक चुकी हैं कि उनमें कोई तारान नहीं बचा है। अर्थात कवियत्री ने यहाँ पर जीवन की वास्तविकता और संघर्ष से अवगत कराया है।

भयपरक संबंधता को व्यक्त करने के लिए कवियत्री आज की कविता की स्थिति को उजागर करते हुए ‘दरबासल मैं ही सजाती आई हूं’ कविता में कहती है कि -

"मैं झूँक कर देखती हूं
कविता के पार
तब सामने बंधेरे में दिखाई देते हैं
उसके फैले सफेद नाखून
और लौटना चाहूँ तो।"
उसकी दमघूँट साँसे
मसलती हैं गर्दन पर
और कानों में भर जाती हैं
रात बेरात टिन पर गिरनेवाली
बारिश जैसी
बेचैन कर देनेवाली आवाज़।

प्रस्तुत कविता में कवियत्री ने आज की कविता की दृष्टि स्तिथि को चित्रित किया है। पहले कविता मन को आनंदित, सुख और प्रेरणा देनेवाले होती थी, लेकिन आज वही कविता ने समाज की दुरारोगियों के कारण कड़या बन गयी है। पहले तो कवियत्री ही अपनी कविता को सजाया करती थी, लेकिन आज उसी कविता ने कवियत्री को दमघूँट परिस्थिति का निर्माण करते हुए उन्हें बेचैन कर दिया है।
अर्थात कवियत्री का उद्देश्य वास्तविक स्थिति का परिचय कराना ही है।

वाज़दा खान जी ने मानवेतर प्रेमपरक संवेदना के अंतर्गत प्रकृति सौदर्य का नवीन चित्रण ‘न्यौता’ कविता में इस प्रकार किया है -

"बादल का एक लम्बा टुकड़ा तेजी से
एक पहाड़ से उगता हुआ
झील को पार करता हुआ
दूसरे पहाड़ी से जा मिला
मानो कोई ईस दूत हो
वहाँ उगे तमाम कतारबद्ध
बृक्ष परियों ने पंख फड़फड़ाए
शूष्क कर सजदा किया बादलों ने
पल भर में आ पहुँची मीठी बयार
हमारे बीच बुदबुदाई होठो ही होठो में"
जैसे दे रही हो न्यौता
सफर पर साथ चलने का।
कवित्री ने इन पंक्तियों में प्रकृति का सजीव विभव का निर्माण किया है।
अपनी अन्य कविता ‘ख्वाहिशों के पेड़’ में कवित्री का कल्पनापर्क विभव
अपनी चरमोत्कर्ष पर पहुँचा है।

"चारों ओर रेतीला आकाश
बहती हैं बीचोबीच चोंदी की नदी
धारा बर्फीली
उगते हैं उसमें ख्वाहिशों के पेड़
संबंधना से बने
उतर जाती हैं दबे पाँव \|\"
प्रस्तुत कविता में कवित्री ने एक ऐसे विभव का निर्माण किया है, जो पाठकों
को एक दूसरी काल्पनिक दुनिया में पहुँचा देती है। कवित्री की इच्छा होती है कि
वह उस ख्वाहिशों के पेड़ से ख्वाहिशें तोड़ लाए, लेकिन असफल होती है। कवित्री
का मन्त्र है कि ख्वाहिशों को पाने के लिए और पूरा करने के लिए इच्छा शक्ति की
आवश्यकता होती है।

सुपमा सिन्हा जी ने मानवीय दुर्गुणों से मुक्ति पाने के लिए प्रयत्नरत मनुष्य के
विभवात्मक चित्रण ‘चक्रवृूठ’ कविता इस प्रकार किया है -

"एक चक्रवृूठ था महाभारत में,
एक चक्रवृूठ हैं
हमारे अन्दर।
हूँड़ रहा हैं रास्ता अभिमन्यु
लोभ, मोह, क्रोध, ईर्षा के बीच
gोल-गोल बह घूम रहा हैं\"
धुप अंधेरे में सोच रहा हैं
इधर से निकले तो कहाँ फंसेंगे
उधर से निकले तो कहाँ जा रुकेंगे।"82

कवयित्री कहना चाहती है कि प्रत्येक व्यक्ति मानवीय संवेदनाओं जैसे लोभ, मोह, क्रोध इत्यादि, रूपी चक्रवृत्त में फंसा रहता है। अभिमन्यु अर्थात् व्यक्ति हर समय उस चक्रवृत्त से मुक्त होने का प्रयास करता रहता है। वह चक्रवृत्त उसके चारों ओर फूलता रहता है। उस अंधेरे चक्रवृत्त में वह सोचता रहता है कि कैसे इस चक्रवृत्त से बाहर निकलें। अर्थात् मनुष्य अपने दुःखों को त्यागने के लिए प्रयास करता रहता हैं, लेकिन उसे सफलता नहीं मिलती।

इसी मानवीय संवेदना को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करने के लिए, कवयित्री अपनी 'मेरा घर' कविता में सृजन विम्ब की सुंग्ठि की हैं, जो इस प्रकार है -

"हर रोज़,
एक नई उस्मीद के साथ,
घर जाती हैं अपने,
और मिलती हैं अपने आप से,
फिर शायद कुछ तो बदला होगा आज।
लेकिन नहीं
सब कुछ ज्यो का त्यो,
जहाँ धरा दिल,
आग उगलती हुई नज़रे,
झुलसा हुआ तन/तड़पता हुआ मन।
लाभ निगाहों से तकती हुई
दीवारे, दरबाज़े और खिड़कियाँ।"83
कवियती हर दिन एक नयी आशा, उस्मीद के साथ अपने घर जाके अपने मन से साक्षात्कार करती है। लेकिन तब उन्हें निराशा ही हाथ लगती है। उनकी मन की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ रहता है। वहीं जहर से भरा दिल अर्थात ईर्षा, वहीं आग उगलती हुई नज़रे अर्थात भ्रष्टाचार, झुलसा हुआ तन अर्थात शोषण, तड़पता हुआ मन अर्थात दुःख, पीड़ा, लाचार नज़रे अर्थात करुणा की भावना से उनका सामना होता है। कवियती के कहने का तात्पर्य यह है कि वे इन दूसरी भावनाओं से मुक्ति चाहती है लेकिन उसमें वे रोज़ विफल हो रही है।

आधुनिक काल में सबसे आवश्यक भावना हैं, शान्ति। इसी शान्ति के समर्थ में मेधावी जैन जी अपनी सितारे कविता में विभ्रमात्मक रूप में इस प्रकार चित्रित किया है -

"सितारे बरस रहे हैं
मैं अबगत हूँ
दिव्य सितारे
असीम शान्ति से भरे,
संकीर्ण मानसिकताओं से ऊपर
स्वच्छ स्वरूप को स्थापन देते।"84

आधुनिक काल में जाति, धर्म, लिंग, भ्रष्टाचार, आतंकवाद जैसे कारणों से संसार में अर्थात फैली हुई है। आधुनिक मनुष्य अपनी संकीर्ण भावनाओं के निद्रा में जीत है। उसे जात नहीं कि रात में शान्ति रूपी सितारे आकाश से झर रहे हैं। अब केवल उसे अपनी निद्रा से उठकर उन सितारों को पकड़ने या देखने की आवश्यकता है। अर्थात मनुष्य को अपने संकीर्णताओं की सीमा से बाहर आकर मानवीय संबंधों और मानवीयता को आत्मसात करने की आवश्यकता है।

कात्यायनी जी ने अपने मन में वसी कविता की जगह को विम्ब्रात्मक शैली में इस प्रकार चित्रित किया है -

311
“एक झील हैं मेरे मन में
खिलाते हूँ छाँटे मटमैले पानी बाली।

वहाँ कोने पर
कुछ पास और लताएँ हैं
तल के कीचड़ से उठकर
पानी की सतह पर पसरी हुई।

*************

वही, यस घोड़ी सी
जगह हैं कविताओं की।”

कवितिका का कहना हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के मन में मटमैली झील की तरह
ईर्ष्या, देय, आं, पृणा जैसी भावनाएँ निहित रहती हैं। प्रेम, सुख, करूणा जैसी लताएँ
भी विद्रोह मान रहते हैं। इन्हीं अन्धकारी और बुरी भावनाओं के पास ही योहड़ी सी जगह
कविता की होती हैं, जहाँ जीवन के अनुभव और सामाजिक भावों को लक्ष्य करके
कविताओं की गृह्व्य होती है।

मनुष्य में कोई भी सपना, इच्छा, आशा, भाव और सचेतन हद्द्य या मन के
सतह में उत्पन्न होता है। इसी मंत्र को गणन मिल जी ने ‘नज़र के आगे एक दीवार
है’ कविता में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है -

"नज़र के आगे एक दीवार हैं
दीवार के पीछे एक कुआँ हैं
कुआँ की सतह पर सीलन हैं
सीलन के नीचे गीली मिट्टी हैं
गीली मिट्टी में फसी एक जड़ हैं
जड़ में एक सपना
आकार लेता है।”

85-86
कवियती का कहना है कि मनुष्य का हदय गीती मिट्टी की तरह होता है, जहाँ पर संबंधनाएँ जैसी जड़ होती हैं, जिससे अनेक प्रकार की भावनाएँ आकर लेकर अनेक माध्यमों के द्वारा अभिव्यक्ति पाती है।

इस प्रकार हृद देख सकते हैं कि कविता में प्रत्येक शब्द ही विम्ब है। इस दृष्टि से तो विम्बों को सीमा में बौधना असम्भव है। समकालीन कवियतियों ने भी अपनी कविताओं में मानवीय संबंधनाओं को व्यक्त करने के लिए अनेक मुद्द विम्बों का निर्माण किया है। जिससे उनका भाव ध्वनि और अभिव्यक्ति संघटन बन पड़ा है। उनकी बिचार धाराएँ, भावनाएँ और संबंधनाएँ आदि उनके विम्बों में मूर्त रूप ग्रहण करके पाठकों के समक्ष एक अलौकिक जगत की मृदा करती है।

### 5.13 समकालीन कवियतियों की कविताओं में अलंकार योजना :-

अलंकार-योजना भी समकालीन कवियतियों का एक विशिष्टता है। अलंकार काव्य के सोन्दर विवादक धर्म के रूप में भावोत्कर्ष और रसबोध के माध्यम है।

आचार्य शुक्ल के अनुसार “भावों का उत्कर्ष दिखाने और रसबोध का रूप, गुण, प्रिया अधिक तीत्र अनुभव कराने में कभी कभी सहायक होनेवाली युक्ति ही अलंकार है।” 87 समकालीन कवियतियों की कविताएँ भी अलंकारों से समृद्ध है। वैसे तो कवियतियों ने अनेक प्रकार के अलंकारों का प्रयोग किया है, लेकिन प्रधानता उपमा और रूपक अलंकारों की है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है -

गुजाता शिवेन जी ने ‘जीना’ कविता में स्वाभिमान के महत्व को इस प्रकार उजागर किया है -

"स्वाभिमान के बिना जीना
कर लो
रीढ़ की हुड़ी के बिना
आदमी की कल्पना।" 88
इन पंक्तियों में कवित्री ने स्वाभिमान की तुलना रीढ़ की हड्डी से की है। जिस प्रकार मनुष्य, रीढ़ की हड्डी के बिना उठ नहीं सकता और बैठ नहीं सकता उसी प्रकार जिसके जीवन में स्वाभिमान, स्वतंत्र अस्तित्व या खुद की पहचान नहीं होता, वह जीवन में ऊपर नहीं उठ सकता, सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

कवित्री के 'रिश्ता' कविता में उपमा अलंकार का सुन्दर उदाहरण मिलता है- 

"आज का रिश्ता
क्षितिज की तरह
जुड़ने की
एक भ्रामक दूषित देता हैं
पास चलते जाओ तो
अलग होता जाता हैं
आगे कहीं मिला हैं
इस अहसास को बढ़ाते हुए।"89

कवित्री ने सम्बन्धों में उत्पन्न अलगाव, अजनबीपन, उपेक्षा जैसी संबंधनाओं को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार क्षितिज दूर होते हुए भी जुड़ने का प्रमाण पैदा करता हैं, उसी प्रकार आज के रिश्ते भी साथ होते हुए भी अलगाव का अनुभव करा रहे हैं।

उपमा अलंकार का एक और चित्रण अनामिका तिवारी जी ने अपनी 'बरसात में कितना मजा देती हैं बूंदे' कविता में किया है -

"बरसात में कितना मजा देती हैं बूंदे
कितने रंग में बिखरती
कितने रूप में संवरती हैं बूंदे
कभी फूलों पर मोती सी
पत्तों पर हीरे कनी सी
कभी तारों पर स्फटिक माला बन
चमकती हैं बूंदें।”90
इन पंक्तियों में कवित्री ने बूंदों को मोती, हीरे, माला जैसे सुन्दर उपामानों से उसकी सुन्दरता को चित्रित किया है।

‘सड़क पर आकर’ कविता में अनुराधा पाटिल जी कहती हैं कि -

"पेड़ पर अकेले बैठे
पंछी तरह चुपचाप
अब दिन चुपके से चले जले जाते हैं
और अपने को ही अपने आप पराये बन जाते हुए
dेखती हैं मैं खुली आँख से
समूची उल्कटता को लगी चीटियों को।”91
इन पंक्तियों में कवित्री ने मनुष्य के ऊँच, उदास, अलगाव और हताशा जैसे संवेदनाओं को स्थापित किया है। यहाँ पर प्रयुक्त उपामान अकेला पंछी कवित्री के मनोभाव को अभिव्यक्त करने में सफल हुई है।

सफलता सरोज जी ने अपनी ‘माँ बीणापाणि के नाम’ कविता में माँ के महत्त्व को रूप अलंकार में इस प्रकार संवेदनशील बनाया है -

"माँ हैं कल्पवुक्ष का मधुवन,
माँ हैं बरसाना – वृद्धावन,
माँ हैं गोकुल मधुरा – काशी,
अवधपुरी का चन्दन – नन्दन।”92
जया जादवानी जी ‘स्मृतियों के पाल से’ कविता में मीरी स्मरण को इस प्रकार अनुभव करती है -
"स्मृतियों के पाल से
उठाती हैं
एक आम
और महक उठती हैं
मिठास से।"\(^93\)

कवियत्री अपने जीवन के स्मृतियों के पाल में से अर्थात गुज़रे हुए सुन्दर व्याख्यान से एक आम अर्थात एक सुन्दर स्मरण को स्मरण करती हैं, जिससे वे महक उठती हैं।

मिठास के अर्थात सुख और आनंद से साराभायों होती है।

वास्तव में समकालीन कविता पारंपरिक रूप से अलंकारों का प्रयोग बहुत कम मिलता है। अभिव्यक्ति की भिन्नता इस समय की कविता का वैशिष्ट्य है। इसलिए, रूपक, उपमा, उत्प्रेरणा से अधिक सैली की भिन्नता इस समय की कविता में उल्लेखनीय है।

5.14 समकालीन कवियत्रियों की काव्य भाषा :-

अलहुदश हकसले का कथन है कि "साहित्य अभिव्यक्ति में सामान्य भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता। अतः साहित्य की भाषा सामान्य भाषा से निष्ठित ही विशिष्ट होगी।"\(^94\) "कथ्य के सम्प्रेरण के लिए भी सामान्य भाषा अपराष होती है। इसलिए, कविता की भाषा सामान्य भाषा से भिन्न होती है और कवि भाषा के विविध प्रयोग करने के लिए मुक्त हैं जिससे वह कविता में सुन्दरता का निर्माण करता है।"\(^95\) काव्य भाषा शब्दों के रूप को बार बार अमूर्त करती है। कवि अर्थ की स्थूलता को तोड़कर उसकी अमूर्त और उन्मुक्त प्रकृति को पुनः स्थापित करता है।

"कविता में ‘शब्द’ अपने स्थूल अर्थ के साथ ही सांकेतिक अर्थ देने में समर्थ होते हैं। अर्थात कविता में शब्द की प्रतीकात्मकता को विस्तार मिलता है, जब कि सामान्य भाषा में उसका स्थिर या स्थूल अर्थ ही लिया जाता है और कभी कभी एक ही स्थान

316
पर विभिन्न अर्थांतर देकर कविता में गुरुल्ल पैदा कर देता है। इसीलिए काव्य भाषा को सामान्य और बयानकारी की भाषा से अलग एक ऐसी भाषा कहा जाता है, जो अनुभूति के स्वरूप को अभिव्यक्ति और स्पष्ट करती है। काव्य भाषा में अनुभूति के सम्प्रेषण की विशिष्टता होती है ।196 शब्दों का चयन, संयोजन, प्रयोग हमेशा विशिष्ट सन्दर्भ और अर्थ में करता है।

“काव्य भाषा का कवि के व्यक्तित्व से बहुत गहरा सम्बन्ध होता है। यह कवि के व्यक्तित्व और भाव के अनुरूप ही बदलती है ” 97 किसी भी कविता की कल्पना हम बिना भाषा के नहीं कर सकते और संरचनात्मक विश्लेषण काव्य भाषा के अनुशीलन के बिना पूरा नहीं हो सकता।

समकालीन कवियों की भाषा भी सरल, सुव्यवस्थित और गहन अनुभूति से युक्त है। कवियों के विचार, संवेदनाएं, भावनाएं, तर्क आदि मूर्ति होकर उनकी भाषा के द्वारा अभिव्यक्ति हुए है। कवियों की भाषा जनसामान्य रही हैं, जिसमें उनकी भाषा संबंधित करने में सक्षम रही है।

कविताओं की भाषा के कुछ लक्षण इस प्रकार हैं -

5.14.1 बोलचाल की भाषा :-

भाषा-संगठन में सर्वप्रथम स्थान शब्दों का ही होता है और दूसरा बाक्यों का। जहाँ तक शब्दों की बात है, समकालीन कवियों ने उदार हदय से उर्दू, देशज और अंग्रेज़ी के साधारण बोलचाल की भाषा का बहुतायत प्रयोग किया है। इसके कुछ उदाहरण दृश्य हैं -

कवियती वाजहा ख़ान ने खबर कविता में उर्दू के शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया है -

"सिमट गए ख्याल टिक गई नज़र"
आकिस्ता आकिस्ता
चलती रहती बसरों खामोश
न जाने कैसे खबर
हो गई तमाशबीनों को
जैसे मुबाबिरी कर दी हो रूह ने।"98

प्रस्तुत कविता में कवियिने उदौ शब्दों के द्वारा अपने मन के भाव को
शब्दबद्ध किया है। इसमें ख्यात, तमाशबीन आदि शब्द उदौ के हैं।
रमणिका गुप्ता जी मजूरारायण कविता में ग्रामीण बोलचाल की भाषा का
सुन्दर प्रयोग इस प्रकार किया हैं -

"मैं रथूराम हूँ
छोटकन के बड़कन के
प्रणाम करू हूँ
मैं मजूर हूँ माई-मन
मेहनत से पेट भरत हूँ
काम मिले तो करत हूँ
या काम की बाट जोहत हूँ
इस लिए मोर रामायण
रोज्ज़ार की स्थाही से लिख दो
सब ज्ञानी
सब गुणी-जन ||"99

कवियिने इन पंक्तियों में गाँव की भाषा का प्रयोग किया है। रथूराम नामक
व्यक्ति के द्वारा स्थिति को प्रभावशाली बनाने के लिए कवियिने गाँव के
बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। इन पंक्तियों में छोटकन, बड़कन, मजूर,
भरत, कत जोहत, मौर आदि शब्द गाँव के हैं। इससे कविता में सरलता, नया आकर्षण और सजीवता आ गयी है।

कवयित्रियों ने अंग्रेजी शब्दों का उपयोग बहुतया किया है। उदाहरण के रूप में सुनीता जैन की ‘बॉय बेटू’ कविता को ले सकते है -

"जाने कब फिर मम्मी आती हैं
यू पूरे दिन कह गले लगाती हैं
कपड़े बदलवाती हैं तब तक
पापा आते हैं हैलो टेगर कह
गाल दबाते हैं और पूछते हैं
हाँ, स्कूल में क्या सीखा ?"100

आधुनिक काल होने के कारण कवयित्री ने अपनी कविता में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। इससे कविता में आधुनिकता का बोध स्पष्ट जलकती है।

5.14.2 नवीन शब्दों का प्रयोग :-

समकालीन कवयित्रियों ने नये शब्दों की मुर्ति भी की है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं -

अनामिका की कविता 'पतिनिर्भू' में कवयित्रि लिखती है कि -

"चिड़िया ही होना था तो शतुर्गुण क्या हुई मैं
सूंघनी ही थी तो कोई टाड़ली नाक मुझे सूंघी -

यह क्या कि सूंघा तो साँप!"

अपनी 'राधा की बेटियाँ' कविता में कहते हैं कि -

"उससे भी आवाज़ आयी
उस अस्फुट जल की
जो नींद में
अम्मा की
कुनमुनाता हैं
हर रात।"101
इन कविताओं में शतुर्मुग, कुनमुनाता आदि शब्द नवीन है। इनसे अलावा
kववितियों ने रोच, तिरपाल, डीसी, टीन खुरचती, स्पेर, लुगदी-लुगदी, भटकोड़ियों,
बनमेथी जैसे नवीन शब्दों का प्रयोग किया है।

5.14.3 वाक्यों की नवीनता :-

नये वाक्य, समकालीन कववितियों की कविता में हर चीज़ को नये ढंग से
कहने की प्रनुभि के ढंग के अन्तर्गत बनाये गये है। वाक्यों में अर्थशृंजना के लिए
वाक्य के स्वरूप में परिवर्तन किया गया है। उदाहरण के लिए काल्यावनी जी के
'भूमण्डस्वलकरण का शास्त्रीय सन्नीत' कविता की इन पंक्तियों को देखिए -

"सा...... रे...... गा...... मा...... मा...... पा...... धा...... नी......
आ...... पा...... धा...... पी.....
पा...... पी...... पी...... पी......
पी...... पी...... पी...... पी......
पी...... पी......
पूं...... पूं......
हूँ....... हूँ....... हूँ....... हूँ........"

'पाखण्ड नरत कथा' कविता के वाक्य संगठन दृष्टव्य हैं -

"कविता में यह दल्द - फद्द
छल - छल्द, गन्द - भरभण्ड।
चमरा - कलछुल - अल्टा - पल्टा
जीवन से जयन्द............

320
आलोचक

ज्यों परमानन्द, आनन्द - कुद - मतिमन्द......

घट - घट में व्यापी डकार
हैं खण्ड-खण्ड पाखण्ड

जय हो...... जय हो...... जय हो......

जय - जय - जय - जय - जय हो......

पो SSSSSSSSSSSSS||"902

इन कविताओं में वाक्यों के गठन का नया स्वरूप दिखाई देता है। साथ ही वाक्यों में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ भी कुछ भिन्न प्रतीत होते हैं।

5.14.4 नवीन विशेषण :-

समकालीन कवियों ने परमपारम विशेषणों का प्रयोग तो किया हैं, साथ ही कुछ नवीन विशेषणों की गुणि भी की है।

बन्दना मिथ्रा जी अपनी 'सिकन्दर' कविता में कहती है कि -

"सिकन्दर
विश्व विजय की
आकांक्षा से
निकले तुम,
खाली हाथ गए
पर मैं तो,
कोई विजय आकांक्षा लेकर
नहीं निकली थी
रिश्तों के बाजार में."

321
अपनी ‘आँसू’ कविता में कहते हैं कि -

"तुम्हारे
आँसूओं के तीर
मेरे दिल को
बेतरह
बिद्व कर रहे है।"103

इन कविताओं में रिश्तों के बाज़ार और आँसूओं के तीर नवीन विशेषण है।

5.14.5 विशेषण विपर्यता :-

विशेषण विपर्यता के अन्तर्गत किसी कथन को विशेष अर्थ - गाम्बीर्य प्रदान
करने के लिए विशेषण को अपने स्थान से हटाकर अन्य स्थान पर विधा दिया जाता
है। जिसके कार्य में अर्थ - गाम्बीर्य के साथ - साथ अभिव्यंजना, वैचिचित्र की भी सृष्टि
हो जाती है। फलतः नवीन अर्थ व्यजना और चमकार के लिए विशेषणों का
विपर्यीकरण भी अत्यंत सजीवी साबित हुआ है। समकालीन कथित्रियों ने भी
सभी क्षेत्रों से नये नय विशेषणों की खोज - की है।

उदाहरणस्वरूप रंजना जायसवाल जी के ‘जब कि तुम ’ कविता को ले सकते
है। वह कहती है कि -

"झुक गये हैं फूलों के चेहरे
झर गया हैं पत्तियों से संगीत
नहीं उतरती
अब कोई साँवली साँझ
आँगन की मुंहेर पर।"
इसी प्रकार अपनी ‘आज भी’ कविता में वे कहती हैं कि -

"पीले पड़ गए हैं प्रेम पत्र
अक्षर उकेरती दैंगलियों की
ध्वनियाँ
gुम गयी हैं, कही स्मृति के
निविष्ठ में।"104

उपर्युक्त उदाहरणों में क्रमशः झुका हुआ फूलों के चेहरे, झरा हुआ पत्तियों का संगीत, साँवली साँस, पीले प्रेमपत्र, आदि में विशेषण विपर्यय स्पष्ट है। प्रेमिका अपने विरह भावना को व्यक्त करने के लिए झुके फूलों के चेहरे और झर गये पत्तियों के संगीत को विशेषण विपर्यय के रूप में प्रयोग किया है। इसी प्रकार प्रेमिका अपने दुःख की भावना को व्यक्त करने पीले प्रेम पत्र और ध्वनियों का स्मृति में गुम होने को विशेषण विपर्यय के रूप में प्रयोग किया है।

5.14.6 गीतात्मकता :-

भावों के सहज - स्वाभाविक, भावनात्मक एवं आवेगमयी ग्रंथ अभिव्यक्ति के प्रकाशन को गीति कहा जाता है। सफल गीति काव्य में चार बातें होनी आवश्यक हैं - आत्माभिव्यक्ति, विचारों की एकरूपता, सन्नीत एवं संख्यितता। गीति काव्य का प्रमुख तत्त्व होता है - लय। यह लय शिल्प का ही महत्वपूर्ण पक्ष नहीं, काव्य का आवश्यक गुण है। यहाँ तक कि अन्याय गद्य भी लय सम्पन्न होता है। इसलिए कविता के लिए लय से मृत्तिका की बात सोचना भी असम्भव है। गीतात्मकता से कविता की आयु बढ़ती है और संप्रेषण मध्ये संगीत के साथ किया जाता है।

समकालीन कवियों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं -

रमणिका गुप्ता जी के ‘चूमे गगन साथ-साथ’ कविता के गीतपरकता इस प्रकार है -
"होते गए सतत दूर हम
उड़ते फिरे छोर छोर हम
पर धरा ही न पाए हम
कि चले साथ-साथ
कि थनें साथ-साथ
कहीं बेठे साथा-साथ
उठे साथा-साथ
साथा-साथ साथा-साथ!!"105

इसी प्रकार रचना शरणा जी के ‘सेवरती जाति हैं’ जिन्दगी कविता में

"अन्न्त आसमान में
उड़ती हवा सी
सरकती जाती हैं
जिन्दगी......
होर हाथों से फिसलती
आसमान में
पतंग सी
कटती जाती हैं
जिन्दगी....... ||"106

निष्कर्ष

इस प्रकार समकालीन कवियत्रियों ने शिल्प के सभी अंगों का संयोजन किया
है। जिससे उनकी कविताएँ संवेदनाओं को सम्प्रभुत करने में सफल हुए हैं।
कवियत्रियों के अमूर्त कल्पनाएँ और विचार शिल्प के द्वारा ही मूर्त रूप को प्राप्‌
किये हैं। कवियत्रियों ने अपने अनुभवों को शिल्प के विविध - अंगों के द्वारा अभिव्यक्त
करने में यश प्राप्त किये है। इन सभी दृष्टियों से शिल्प के क्षेत्र में कवियतियों को उपलब्धि अवश्य मिला है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उद्दृत - साठोतरी कविता में सांस्कृतिक चेतना - डॉ. महावीर वल्स, प. 242
2. प्रधानमन्त्री रेणु का कथा शिल्प - डॉ. रेणु शाह, प. 1
3. वही
4. वही
5. संस्कृति - अंग्रेजी दिक्षानि-वि. एस. आपेक्षिक, प. 154
6. उद्दृत - महाकाव्याय उपन्यासों की शिल्पविधि-डॉ. शंकर बसंत मुंडल, प. 17
7. प्रधानमन्त्री रेणु का कथा शिल्प - डॉ. रेणु शाह, प. 1
8. उद्दृत - महाकाव्याय उपन्यासों की शिल्पविधि-डॉ. शंकर बसंत मुंडल, प. 17
9. उद्दृत - श्री लाल शुक्ल के उपन्यासों का शिल्प विधान - डॉ. पी. वी. कोटम, प. 41
10. द बर्ड बुक दिक्षानि- शी.एल. बारनारायण, आर. के. बारनारायण, प. 2154
11. बुधुरंजनी - हिंदी कोष भाग-2 - डॉ. हरदेव बाहरी, प. 1931
12. मानक अंरेजी - हिंदी कोष - सं. सत्यप्रकाश, बनभद्रप्रसाद मिथिल, प. 1390
13. हिंदी शब्द सागर - सं. शालामुनरायण, प. 475
14. नवनय विशाल शब्द सागर - सं. श्री नवलजी, प. 1344
15. हिंदी शब्द कोश - हरदेव बाहरी, प. 776
16. उद्दृत - दसवें दशक की हिंदी नाटक: संवेदना एवं शिल्प - डॉ. निधि गुप्ता, प. 40
17. उद्दृत - वैज्ञानिक उपन्यास और उपन्यासकार - डॉ. जगन्नाथ चौधरी, प. 165
18. हिंदी उपन्यास: शिल्प और प्रशोध - डॉ. निकून सिंह, प. 251
19. हिंदी कहानियों की शिल्पविधि का विकास - डॉ. श्लेष्मीनारायण लाल, प. 2
20. हिंदी उद्दृत उपन्यास शिल्प: विद्वेष - डॉ. प्रभुतारा, प. 23
21. उद्दृत - श्रीम साहित्य के साहित्य का अनुशिलन - डॉ. सुंदरबाबा, प. 169
22. कहानी-रचना प्रक्रिया और स्वरूप - श्री बद्रोदी, प. 59
23. उद्दृत - श्रीम साहित्य के साहित्य का अनुशिलन - डॉ. सुंदरबाबा, प. 169
24. उद्दृत - श्रेष्ठता कथा साहित्य: समीक्षा और सूच्यांक - डॉ. दरम्भवज बिपारी, प. 219
25. आधुनिक हिंदी काव्य शिल्प - मोहन अवस्ती, प. 6
26. आधुनिक हिंदी कविता में शिल्प - डॉ. कैलाश बाबेरी, प. 19
27. नटी कविता: खोल और सिद्धांत - डॉ. विजय द्विवेदी, प. 109
28. स्तीता रथस्य - वाल गंगाधर तिलक, प. 415
29. दयालूक के गोरब लिङ्ग - श्रीपाल सिंह, प. 226
30. विजय शास्त्री भाग-14 - नगेन्द्रनाथ वसु, प. 546
31. हिंदी साहित्य कोश - सं. गांशन मणिलाल काझाल, प. 471
32. इडावेनोरियोंडित्रिंटिका, भाग-21 (1964), प. 701
33. चित्रायणियाँ भाग-2 - रामचन्द्र शुक्ल, प. 110
34. हिंदी साहित्य में विविध बाव - डॉ. प्रभुतारादास शुक्ल, प. 468
35. हिंदी कविता में युगांतर - डॉ. सुधीन्द्र, प. 368
36. कविता में अभिव्यक्ति - लक्ष्मीनारायण सुधाराज, प. 116
37. आधुनिक हिंदी कविता में शिल्प - कैलाश बाबेरी, प. 75

325
81.खबाहिशों के पेड़, पृ.104
82.चक्रन्यूह, पृ.33
83.मेरा घर, पृ.43
84.सितारे, पृ.27
85.कविता की जगह, पृ.71
86.नज़र के आगे एक दीवार है, पृ.50
87.रम मीमांसा - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ.358
88.जीना, पृ.15
89.रिश्ता, पृ.39
90.वरचूह में कितना मज़ा दे ती हैं हुंद्वे, पृ.25-27
91.सड़क पर आकर, पृ.63-64
92.माँ बीणापाणि के नाम, पृ.29
93.स्मृतियों के पाल से, पृ.29
94.निटरेंचर एण्ड साइड - एल्डर हक्सले, पृ.12
95.पोपुलर इमेज - सी.डी.टूर्ने, पृ.135
96.नन्दा कबिता के प्रमुख प्रबंधकों - संती कुमार, पृ.14
97.नन्दा कबिता का तक् शाख - डॉ.विन्यास प्रमाद तिवारी, पृ.151
98.बिवर, पृ.127
99.मजदूरायण, पृ.15
100.बॉय बेटू, पृ.230
101.पतितना, पृ.27-29, राधा की वेडियो, पृ.26-27
102.सम्प्रदाय का शास्त्रीय संगीत, पृ.112, पाखण्ड-पत्र-कथा, पृ.109
103.सिकोल्त - पृ.93, आंसू, पृ.92
104.जब कि तुम, पृ.42-43, आज भी, पृ.47-48
105.जूसे सण साथ-साथ, पृ.29
106.मैंवर्ती जानी हैँ जिन्दगी, पृ.51

***